Gyanvividha, Vol.-2; Issue-3 (July-Sept.) 2025 : PP-367-370

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-2.25
Vol.-2; Issue-3 (July-Sept.) 2025
Page No.- 367-370
©2025 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

1. ममता कुमारी
एम. ए., नेट,
शोधार्थी-हिंदी, बी. आ. ए. बिहार
विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर.

2. प्रो. सुरेन्द्र प्रसाद
प्रभारी प्रचार्य, एमजेके कॉलेज, बेतिया.

Corresponding Author :

ममता कुमारी
एम. ए., नेट,
शोधार्थी-हिंदी, बी. आ. ए. बिहार
विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर.

मृदुला गर्ग की कथा दृष्टि

मृदुला गर्ग (25 अक्टूबर, 1938 ई.) हिंदी की प्रतिनिधि कथा लेखिका हैं। उनकी पहली कहानी 'रुकावट' कुमलेश्वर द्वारा संपादित 'सारिका' पत्रिका में 1971 ई. में छपी। पाँच दशकों से वे सृजन कर्म में रत हैं। उपन्यास, कहानी, नाटक, निबंध और स्मरण विधाओं में उनकी बीस से अधिक कृतियाँ प्रकाशित हैं। 'चितकोबरा' उपन्यास से वे विशेष चर्चा में आयी। 'अनित्य', 'कठगुलाब', 'मिलजुल मन' उनकी लोकप्रिय औपन्यासिक कृतियाँ हैं। मृदुला गर्ग के दस कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं, जो निम्न है- 'उर्फ सैम' (1986 ई.), 'कितनी कैदे' (1975 ई.), 'ग्लेशियर से' (1980 ई.), चर्चित कहानियाँ, (1993 ई.), 'छत पर दस्तक' (2006 ई.), जूते का जोड़ गोभी का तोड़ (2006 ई.), 'टुकड़ा-टुकड़ा आदमी' (1976 ई.), 'डैफोडिल जल रहे हैं' (1978 ई.), 'शहर के नाम' (1990 ई.), 'समागम' (1996 ई.)।

मृदुला गर्ग के पास अपनी मौलिक कथा दृष्टि है। उनके संबंध में कहा भी गया है- "स्वतंत्रता के उपरांत जिन गिने-चुने सर्जकों के मार्फ़त हिंदी कथा साहित्य में आधुनिकता की एक नई ऊर्जा व चमक आई उनमें से एक जरूरी और अव्वल नाम है 'मृदुला गर्ग'। जितना सशक्त लेखन उन्होंने किया है वह सचमुच अपने ढंग का अद्भुत लेखन है। मौलिक कथ्य एवं निर्भीक अभिव्यक्ति उनके सृजन की विशिष्टता है। उनकी सर्जना का लक्ष्य है पारंपरिक मान्यताओं को एक नई सजग आधुनिक दृष्टि प्रदान करना। उनके रचना-संसार में सभी गद्य विधाएँ सम्मिलित है : उपन्यास, कहानी, नाटक, निबंध, यात्रा-साहित्य, संस्मरण, अनुवाद आदि। परंतु वे मूलतः हैं- कथाकार। स्त्री के समग्र मनुष्य होने के सारे अहसास उनके कथा साहित्य में विद्यमान है। बकौल रमेश दूबे, उन्होंने अपने चिंतन में, अपने वैचारिक-बौद्धिक मनोभाव में और भौतिकताओं में

ऊब भरे वस्तु संसार में स्त्री की एक ईमानदार मनुष्य छवि का अवलोकन किया, उसे अपने अन्दर से लेकर, व्यापक स्त्री संसार तक ले जाने का प्रयत्न किया और यह भी नहीं कि इस समूचे उद्यम में उन्होंने स्त्री को महिमा-मंडित करने का कोई प्रदर्शन किया हो बल्कि, स्त्री को उसकी आत्म- छवि के संपूर्ण पक्षों के साथ प्रस्तुत किया"[1]।

अपने लेखन के प्रारंभिक दौर के संबंध में मृदुला जी ने स्पष्ट किया है- "क्यों नहीं? बड़ा दिलचस्प मामला है। आपको बतलाना चाहूंगी कि मैंने पहले-पहल अंग्रेजी में लिखना शुरु किया था। एक विषय के तौर पर हिंदी से मेरा जुराव नहीं था, क्योंकि बी. ए., एम.ए. में मेरा विषय अर्थशास्त्र था। काफी समय तक मैं अर्थशास्त्र से जुड़े मुद्दों पर लेख लिखती रही थी। उसके बाद मैंने अंग्रेजी में कविताएँ लिखी। अंग्रेजी में मैंने कुछ कहानियां भी लिखी, बहुत कम, एक या दो। धीरे-धीरे मैंने महसूस किया कि जहाँ तक विचारों को अभिव्यक्त करने का प्रश्न था, वह काम मैं अंग्रेजी में बखूबी कर पाती थी, पर जब मुझे भावप्रधान दृश्य को लिखना होता तो महसूस होता कि अपने को खोलने या अभिव्यक्त करने में ज्यादा मैं खुद को छिपाने का काम कर रही हूँ। यह एक बड़ी वजह बनी हिंदी में लेखन करने की। हालाँकि मैंने अपनी कुछेक रचनाओं का अंग्रेजी में अनुवाद भी किया। काफी कहानियों और एक उपन्यास का अंग्रेज़ी अनुवाद किया, अन्य एक लीक से हटे लेखक, योगेश गुप्ता की कुछ कहानियों का अनुवाद भी। अनुवाद की प्रक्रिया में मैंने अनुभव किया कि मैं मूल रचना में इतने बड़े स्तर पर रद्दोबदल कर दिया करती थी कि वास्तव में यह अनुवाद कहे जाने योग्य नहीं रहता था। मैंने यह भी बखूबी महसूस किया कि जब मुझे आर्थिक विचारों से जुड़े विषयों पर लिखना या बोलना होता तो अंग्रेजी में अच्छी तरह लिख या कह लेती, पर जब कोई भावात्मक संदर्भ उपस्थित हो जाता तो लगता, उसे हिंदी में ज्यादा अच्छी तरह व्यक्त कर सकती थी। इस पुस्तक में हिंदी के प्रयोग में मेरा ख्याल है, मैंने काफी खुले दिमाग से काम लिया है। ठीक वही भाषा इस्तेमाल की है जो मैं अक्सर बोलचाल में प्रयोग करती हूं, जो मेरे दिलों दिमाग पर दस्तक देती है"[2]।

महिला लेखन की शक्ति को रेखांकित करते हुए वे कहती हैं- "हमारे यहाँ स्त्री शोषण जग विख्यात है, विभिन्न तरीकों से स्त्री शोषित होती है। मगर जो भी डिस्कोर्स है, बाहर से आया है और वही यहाँ लागू होता है। डिस्कोर्स आया क्यों? इसलिए आया क्योंकि पहले पहल तो अधिकार ही मांगे गए थे। जब अधिकार मांगी तो विरोध में कहा गया कि स्त्री यह सब काम नहीं कर सकती- राजनीति नहीं कर सकती, प्लान नहीं उड़ा सकती, डॉक्टर बन सकती है, पर सर्जन नहीं बन सकती। तो उसका जवाब देने के लिए हुआ यह की शोध करके कहा गया कि नहीं स्त्री-पुरुष के बीच कोई अंतर नहीं है स्त्री सब कुछ कर सकती है जो पुरुष कर सकता है। एक ही बात बचती थी कि स्त्री शिशु को जन्म दे सकती है, पुरुष नहीं दे सकता। इसके अलावा कोई दैहिक या जैविक अंतर नहीं था। तो स्वभाव से अंतर नहीं है, यह फेमिनिस्ट मानता है। मगर संस्कारगत और संस्कृतिगत अंतर है। जाहिर सी बात है कि अगर बच्चों के जन्म से लेकर ही उन्हें (बालक-बालिकाओं) को अलग-अलग करके देखेंगे तो वह अंतर आ सकता है, संस्कारगत और संस्कृतिगत दोनों। देखिए, हमारे यहां यह चलन है कि जो भी कल्याणकारी काम होगा वह स्त्री करेगी। हाँ यह अंतर है। नहीं-नहीं यह काल्पनिक नहीं है। यह परंपरा बनी हुई है, पेशा बन चुका है। सामाजिक व्यवहार का हिस्सा बन गया है और फिर संस्कृति का हिस्सा भी बन गया है। तो स्त्री चाहे बड़े तबके की हो या छोटे तबके की, ईंधन-पानी का जुगाड़ करना हो या बीमार की सेवा, वह अन्य काम भी करेगी मगर यह काम उसकी जिम्मे रहेंगे ही। यही मध्य वर्ग में भी होता

है कि स्त्री काम भी करेगी, दफ्तर भी जाएगी मगर घर का काम और बच्चे जनने का काम उसी का रहेगा। बच्चा पैदा वही करेगी, उसके बाद स्तनपान। यह तो एक तरह से स्वाभाविक और नैसर्गिक जिम्मेदारी कुछ महीनों तक उसकी बनी रहती है। अन्य देशों में देखा जाए तो जो स्त्रियोचित काम माने जाते थे, पारंपरिक रूप से उनमें पुरुष हिस्सेदारी करने लगा है। मगर हमारे यहाँ तो यह भी शोषण का एक माध्यम बन गया है कि स्त्री बाहर भी काम करें और घर में भी काम करें तो उस पर दुगुना बोझ हो जाता है और उसमें उसे सहयोग भी नहीं मिलता"[3]।

मृदुला गर्ग के कथा साहित्य में स्त्री जीवन की सार्थक अभिव्यक्ति हुई है। वे मानती हैं कि कोई भी कथा स्त्री के बिना पूरी नहीं होती। हिंदी कथा साहित्य में स्त्री चरित्र को लेकर उनकी अपनी अवधारणा है। एक साक्षात्कार में उन्होंने कहा भी है- "स्त्री के बिना कोई लेखन संभव ही नहीं है। स्त्री तो हर कृति में रहती है मगर महत्वपूर्ण यह है कि आपकी स्त्री कैसी है? किस तरह की आपने गढ़ी है। एक खास किस्म की स्त्री जैनेंद्र जी ने गढ़ी थी, जो अपने लिए निर्णय लेती है, सब कुछ अपनी समझ से करती है। पर एक नैतिक मापदंड में बंधी है क्योंकि लेखक ने उस पर एक देवत्व हावी कर रखा है। कृष्ण बलदेव का कोई सहानुभूति पूर्ण रवैया तो है नहीं स्त्री के प्रति। जो चला आ रहा है उसी तरह उन्होंने उसे गढ़ा है; हाँ सेक्स के प्रति उसके रुझान को और उससे ज्यादा उसके प्रति पुरुष के यौनिक रुझान को बेबाक और ईमानदार ढंग से रखा है। मनोहर श्याम जोशी के तो सारे पात्र अलग होते थे, चाहे स्त्री हो या पुरुष। वे दर्शाते हैं की सारी सृष्टि एक माया है, भ्रम है ... सब उसी माया से ठगे जा रहे हैं पर बहुत बार उसकी प्रतिनिधि स्त्री को बनाते हैं। वह मात्र स्त्री नहीं, हमारे पूरे दर्शन की प्रतिनिधि है। उन्होंने 'कसप' जैसा उपन्यास भी लिखा। सामाजिक व वैयक्तिक रूप से उसकी स्त्री इतनी साहसिक है कि आज तक वैसा किसी ने लिखा नहीं। फिर जगदंबा प्रसाद दीक्षित हैं; उनके उपन्यास बिल्कुल दूसरी तरह के हैं। उसमें स्त्री अधिकतर शोषित होती है। मैं लेखन को उसके मायर या ऊंचाई से जांचती हूँ, कि लेखक किस हद तक अपने पात्रों से एकात्म हुआ है और किस हद तक पाठक को अपने पात्रों के नजदीक लाकर वहाँ से हट गया है। खुद हट जाना बड़ी बात है। ये सभी लेखक मुझे पसंद है जिनके आपने नाम लिये। मनोहर श्याम जोशी को तो मैं अपना गुरु मानती हूँ। हाँ, शिवमूर्ति की 'त्रियाचरित्र' मुझे जानबूझकर यानी सायास लिखी हुई लगती है"[4]।

अपने प्रारंभिक लेखन और सोच को स्पष्ट करते हुए उन्होंने स्वीकार किया है- "जहाँ तक मेरा सवाल है, मैंने लिखना शुरु किया साठ के बाद, जब कई परंपराएँ लौट-लौट कर आ चुकी थीं और आ-आकर लौट चुकी थीं। इसीलिए मेरी स्मृति या अवचेतन पर सभी की छाप रही होगी। किसी एक पुख्ता, गैरलचीली विचारधारा ने अलबत्ता, मुझे गिरफ्त में नहीं लिया। इसलिए मेरे मन में बराबर यह सवाल उठता रहा की संगति या विसंगति को जो भी राह, जिस किसी ने पकड़ी वह सायास थी या नहीं? वह विचारधारा के तहत थी या लेखक का अपना स्वभाव, संस्कार व घटित जीवन ही ऐसा था कि अनायास वह राह पकड़ ली गई। जब-जब मैंने यह सवाल दूसरे लेखकों से पूछा, वह नाराजगी का सबब बना, जैसे वह उनकी गहरी जमी महानता को शक की निगाह से देख रहा हो। तो हुआ यह की कई धक्के खाने के बाद, घूम फिर कर, यह सवाल मैं खुद से करती रह गई। और तब मुझे संगति में विसंगति नजर आई। जवाब में सवाल दिखा और मौलिकता में पुनर्लेखन सिर धुनता नजर आया। लेखक के धक्के बर्दाश्त कर भी लिए पर जीवन में मिले धक्कों ने, अंततः संयुक्त व अनायास घटित होते प्रकरणों की प्रबलता को स्वीकार करवा कर छोड़ा"[5]।

मृदुला गर्ग ने अर्थशास्त्र से एम.ए. किया था। अर्थतंत्र और बाजारवाद की उनकी गहरी समझ ने उनकी कथा दृष्टि को प्रभावित किया। कथा की संवेदना और शिल्प को लेकर वे प्रारंभ से ही सजग रही हैं। उनकी कई कहानियों में अमेरिकी प्रवास के अनुभव हैं। 'मीरानाची' जैसी कहानी में स्त्री विमर्श का एक नया रूप दिखाई देता है। उनके उपन्यासों में भी उनकी कथा दृष्टि की जीवन्तता परिलक्षित होती है। 'कठगुलाब' उपन्यास में कथा शिल्प की नवीनता दिखाई देती है। 'अनित्य' के अतिरिक्त उनके प्रायः सभी उपन्यासों में आधुनिक नारी की जटिल मानसिकता और अस्मिता का संघर्ष स्पष्टतः दिखाई देता है। निस्संदेह अपनी सुलझी हुई कथा दृष्टि के कारण ही वे समकालीन हिंदी कथा लेखन के क्षेत्र में एक अविस्मरणीय लेखिका के रूप में प्रतिष्ठित हुई हैं।

संदर्भ- सूची :

1. मृदुला गर्ग की संचयिता, संपादक - छबिल कुमार मेहेर, नई किताब प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण-2019 ई., ब्लर्ब से.
2. उपरिवत, लोठान लुरसे से बातचीत, पृष्ठ संख्या – 412.
3. उपरिवत, हिन्दु कॉलेज के छात्रों से बातचीत, पृष्ठ संख्या-441.
4. उपरिवत, पृष्ठ संख्या-451.
5. संपूर्ण कहानियाँ, संपादक - मृदुला गर्ग, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पहला संस्करण - 2022 पृष्ठ संख्या- 8, भूमिका से.

.